स्वास्थ्य पर ध्यान

दुनियाभर में करीब 42 लाख लोग सर्जरी कराने के एक महीने के भीतर मौत का शिकार हो जाते हैं. यह आंकड़ा सभी तरह की मौतों की कुल संख्या का लगभग आठ फीसदी है. एड्स, टीबी और मलेरिया के कारण भी इतने लोग नहीं मरते हैं. प्रतिष्ठित मेडिकल जर्नल 'द लांसेट' में प्रकाशित एक ताजा अध्ययन में यह भी रेखांकित किया गया है कि इन मौतों के आधे शिकार निम्न और मध्य आय के देशों में हैं जिनमें भारत भी शामिल है. सुविधाओं और गरीबी के कारण ऐसे देशों में हर उस रोगी का ऑपरेशन नहीं हो पाता है, जिसे इसकी जरूरत होती है. यदि ऐसा हो पाता, तो मरनेवालों की संख्या 61 लाख तक हो सकती है. मात्र 29 देश ही ऐसे हैं, जहां होनेवाली सर्जरी की गुणवत्ता का आकलन है. स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था में असंतुलन और आर्थिक असमानता के कारण आज धरती पर लगभग पांच अरब लोग ऐसे हैं, जिनकी पहुंच सस्ती और सुरक्षित सर्जरी तक नहीं है. गरीब और विकासशील देशों में 14 करोड़ से ज्यादा ऐसे मरीज हैं, जिन्हें ऑपरेशन की तुरंत जरूरत है, पर उन्हें यह सुविधा नहीं है.

सवा अरब से भी बड़ी आबादी को समुचित स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराये बिना समृद्ध भारत के सपने को साकार करना संभव नहीं है.

लांसेट ने एक अन्य आकलन के अनुसार, 88 देशों में 2030 तक स्वास्थ्य केंद्रों पर सर्जरी की सामान्य व्यवस्था के लिए 420 बिलियन डॉलर के निवेश की आवश्यकता है. इन देशों में चीन, भारत और दक्षिण अफ्रीका जैसी तेजी से उभरती अर्थव्यवस्थाएं भी हैं. यदि यह साधारण निवेश भी नहीं किया जा सका, तो विकासशील देशों को 2015 और 2030 के बीच 12.4 ट्रिलियन डॉलर तक का नुकसान हो सकता है. भारत के साथ यह विडंबना भी है कि यहां स्वास्थ्य सेवाओं के अभाव से मरनेवालों की संख्या से अधिक वैसे लोगों की संख्या है, जो खराब चिकित्सा के कारण काल के गाल में समा जाते हैं. वर्ष 2016 में 8.38 लाख बीमार उपचार के बिना मारे थे, जबकि बदहाल और लापरवाह चिकित्सा ने 16 लाख जानें ले ली थी. स्वास्थ्य सेवा की बेहतरी मोदी सरकार की बड़ी प्राथमिकताओं में रही है. मिशन इंद्रधनुष के तहत व्यापक टीकाकरण, प्रधानमंत्री जन-आरोग्य योजना के तहत गरीब परिवारों को स्वास्थ्य बीमा, अनेक अखिल भारतीय चिकित्सा अनुसंधान संस्थानों तथा डेढ़ लाख स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना के साथ स्वच्छता और जागरूकता बढ़ाने जैसी उल्लेखनीय पहलें की गयी हैं. स्वास्थ्य बीमा योजना जहां दुनिया की ऐसी सबसे बड़ी योजना है, वहीं टीकाकरण प्रयास को वैश्विक स्तर पर सराहना मिली है. भारत उन देशों में हैं, जो स्वास्थ्य पर सबसे कम निवेश करते हैं. चूंकि यह समस्या कई दशकों से चली आ रही है, सो इसे सुधारने में भी समय लगेगा. सरकार आगामी कुछ वर्षों में इस मद में सरकारी खर्च को दोगुना करने की कोशिश में है तथा बीमा और भागीदारी से निजी क्षेत्र का सहयोग भी लिया जा रहा है. सवा अरब से भी बड़ी आबादी को समुचित स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराये बिना समृद्ध भारत के सपने को साकार करना संभव नहीं है, इसलिए वर्तमान प्रयासों की गति बढ़ाने की आवश्यकता है.

किसानों को मिले दीर्घकालिक हल

आशुतोष चतुर्वेदी
प्रधान संपादक, प्रभात खबर
ashutosh.chaturvedi@prabhatkhabar.in

चुनाव की दृष्टि से ही सही, यदि हमारे किसानों को कुछ मदद मिल जाए, तो इसमें कहीं से कोई बुराई नहीं है, लेकिन अंततः किसानों की समस्याओं का दीर्घकालिक हल निकलना चाहिए.

मोदी सरकार की ओर से पेश किया गया अंतरिम बजट वैसे तो समाज के हर वर्ग को साधने वाला है, लेकिन यह छोटे किसानों पर विशेष मेहरबान है. अंतरिम वित्त मंत्री पीयूष गोयल ने बजट में किसानों, मजदूरों और मध्य वर्ग को ध्यान में रखते हुए कई घोषणाओं का एलान किया. यह मौजूदा सरकार का अंतिम बजट था. वैसे तो अंतरिम बजट में अगली सरकार चुने जाने तक के खर्च की योजना और लेखा-जोखा होता है, लेकिन इस बजट में उससे कहीं अधिक है. इस साल अप्रैल-मई में लोकसभा चुनाव होने की उम्मीद है और मई के अंत तक नयी सरकार सत्ता संभाल लेगी. जैसी कि उम्मीद की जा रही थी, लोकसभा चुनाव का असर इस बजट में स्पष्ट देखने को मिला. प्रधानमंत्री मोदी हर अवसर का लाभ उठाने में माहिर हैं और उन्होंने इस बार भी इस मौके को यूं ही जाने नहीं दिया. मोदी सरकार ने बजट के जरिये उन सभी तबकों को साधने की कोशिश की, जो चुनाव नतीजों को प्रभावित कर सकते हैं. वित्त मंत्री ने दो हेक्टेयर तक खेती करने वाले छोटे किसानों को सालाना 6000 रुपये की मदद देने की घोषणा की है. यह रकम 2-2 हजार रुपये की तीन किस्तों में सीधे किसान के खाते में जायेगी. साथ ही पांच लाख रुपये तक सालाना आय वाले मध्य वर्ग के लोगों को कर के दायरे से बाहर कर दिया. इतना ही नहीं, उन्होंने असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के लिए पेंशन योजना भी शुरू करने की घोषणा की है, जिसके तहत 60 साल की उम्र के बाद उन्हें हर महीने तीन हजार रुपये की पेंशन मिलेगी. किसानों के लिए बजट में कई घोषणाएं की गयी हैं. बजट में कहा गया है कि मछली पालन के लिए अलग विभाग बनाया जायेगा, मछुआरों को क्रेडिट कार्ड से कर्ज पर दो फीसद तथा प्राकृतिक आपदा में किसानों को दो फीसद ब्याज की छूट दी जायेगी और समय से कर्ज लौटाने पर तीन फीसद अतिरिक्त ब्याज माफ किया जायेगा, लेकिन किसानों को हर साल छह हजार रुपये की मदद ज्यादा चर्चा में है. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कहा कि पहले किसान योजनाओं का लाभ केवल 2-3 करोड़ किसानों को मिलता था, लेकिन अब 12 करोड़ किसानों को मिलेगा. प्रधानमंत्री ने इसे किसानों को मजबूती देने वाला बजट बताया है. एक भारतीय परिवार में औसतन पांच सदस्य होते हैं. इस हिसाब से देखा जाए, तो इस योजना से लगभग 60 करोड़ लोग प्रभावित होंगे. चुनाव की दृष्टि से यह वोट देने वाली आबादी का एक बड़ा हिस्सा है. दिलचस्प तथ्य है कि यह योजना एक दिसंबर, 2018 से लागू मानी जायेगी और इसके तहत मिलने वाले दो हजार रुपये की पहली किस्त किसानों को 31 मार्च, 2019 से पहले दे दी जायेगी. विपक्षी नेता और कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने इसे किसानों के साथ मजाक बताया है. हालांकि पिछले सप्ताह ही राहुल गांधी ने सत्ता में आने पर एक न्यूनतम आय गारंटी योजना लाने का वादा किया था. मेरा मानना है कि किसानों को लोकसभा चुनावों की दृष्टि से ही सही, यदि कुछ मदद मिल जाए, तो इसमें कोई बुराई नहीं है. अमेरिका से लेकर यूरोप तक, सभी देशों की सरकारें अपने किसानों का ख्याल रखती हैं और सब्सिडी के माध्यम से किसानों की भारी मदद करती हैं, पर यह तथ्य भी है कि छह हजार हजार रुपये की आर्थिक सहायता किसानों को तात्कालिक मदद तो प्रदान कर सकती है, लेकिन यह किसानों की समस्याओं का दीर्घकालिक हल नहीं है.

पिछले एक दशक से अपने देश के किसानों की स्थिति बहुत खराब रही है. उन्हें उनकी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है. यह हर साल का दृश्य है कि टमाटर और अन्य सब्जियों के दाम इतने कम हो जाते हैं कि किसान उन्हें सड़कों पर फेंक कर चले जाते हैं. ऐसी तस्वीरें फिर सामने आने लगी हैं. किसानों के आंदोलन मोदी सरकार के दौरान विरोध की बड़ी आवाज बने हैं. मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ विधानसभा चुनावों में भाजपा की हार में भी किसानों की नाराजगी एक वजह मानी जाती है. किसानों की चिंताजनक स्थिति का अंदाज इस बात से लगता है कि पिछले 10 वर्षों में देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले लगभग तीन लाख किसानों ने आत्महत्या की है. किसानों की सबसे बड़ी समस्या फसल का उचित मूल्य है. एक किसान अपनी फसल में जितना लगाता है, उसका आधा भी नहीं निकलता है. यही वजह है कि आज किसान कर्ज में डूबे हुए हैं. किसानों पर बैंक से ज्यादा साहूकारों का कर्ज है. यह सही है कि मौजूदा केंद्र सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य में दो गुना की वृद्धि की है, लेकिन मौजूदा समय में खेती में लागत खासी बढ़ गयी है. कुछ व्यावहारिक समस्याएं भी हैं, जैसे सरकारें बहुत देर से फसल की खरीद शुरू करती हैं. तब तक किसान आढ़तियों को फसल बेच चुके होते हैं. कृषि भूमि के मालिकाना हक को लेकर भी विवाद पुराना है. जमीनों का एक बड़ा हिस्सा बड़े किसानों, महाजनों और साहूकारों के पास है, जिस पर छोटे किसान काम करते हैं. ऐसे में अगर फसल अच्छी नहीं होती, तो छोटे किसान कर्ज में डूब जाते हैं.

जब भी किसानों का आंदोलन होता है, तब स्वामीनाथन कमेटी की सिफारिशों की चर्चा जरूर होती है. दरअसल, किसानों की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए हरित क्रांति के जनक प्रो एमएस स्वामीनाथन की अगुआई में नवंबर, 2004 में एक कमेटी बनी थी. इस कमेटी ने अक्तूबर, 2006 में अपनी रिपोर्ट सौंपी थी, जिसमें खेती और किसानों की दशा में सुधार के लिए अनेक सिफारिशें की गयी थीं. स्वामीनाथन कमेटी की सबसे प्रमुख सिफारिश थी कृषि को राज्यों की सूची के बजाय समवर्ती सूची में लाया जाये, ताकि केंद्र व राज्य दोनों किसानों की मदद के लिए आगे आएं. स्वामीनाथन कमेटी ने बीज और फसल की कीमत को लेकर भी सुझाव दिये थे और कहा था कि किसानों को अच्छी क्वालिटी का बीज न्यूनतम मूल्य पर मुहैया कराया जाए और उन्हें फसल की लागत का पचास प्रतिशत ज्यादा दाम मिले. कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की थी कि किसानों के कर्ज की ब्याज दर 4 प्रतिशत तक लायी जाए, लेकिन किसान आज भी स्वामीनाथन कमेटी की सिफारिशों को अमल में लाने की जद्दोजहद कर रहे हैं. यह देश का दुर्भाग्य है कि दशकों से हमारा तंत्र किसानों के प्रति उदासीन रहा है. अगर आप गौर करें, तो पायेंगे कि विकास की दौड़ में हमारे गांव लगातार पिछड़ते जा रहे हैं. बिजली-पानी, सड़क, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी सुविधाएं शहरों में केंद्रित होकर रह गयी हैं. आजादी के 70 साल हो गये, लेकिन गांवों में बुनियादी सुविधाओं का नितांत अभाव है. गांवों का जीवनस्तर सुधरना चाहिए. विकास की प्राथमिकता के केंद्र में गांव होने चाहिए. बुनियादी सुविधा उनका हक है. हम सबको किसानों की जायज मांगों का समर्थन करना चाहिए.

समाज को हिंसक होने से रोकिए

कुमार प्रशांत
गांधीवादी विचारक
k.prashantji@gmail.com

उद्दात्त मन का समाज बनाना एक लंबी, सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रिया है, जिसमें आपको तलवार की धार पर चलना पड़ता है, गोली झेलनी पड़ती है, फिर चाहे वह ईसा हों, केनेडी हों, मार्टीन लूथर किंग हों या गांधी हों!

मुझे यह जानने में कोई दिलचस्पी नहीं है कि अलीगढ़ में अखिल भारत हिंदू महासभा के जिन लोगों ने 30 जनवरी, 2019 को महात्मा गांधी को 'सामने खड़ा करके' फिर से गोली मारने का कुत्सित खेल खेला, वे कौन थे, उनकी गिरफ्तारी हुई या नहीं और गिरफ्तारी नहीं हुई, तो क्यों नहीं हुई? कोई मुझसे पूछे, तो मैं बार-बार यह कहने को तैयार हूं कि न तो उनकी गिरफ्तारी होनी चाहिए और न उनके पीछे पुलिस छोड़ी जानी चाहिए. उन्होंने जो किया, उसके पीछे की उनकी वैचारिक दृढ़ता और अपने किये के परिणाम के सामने खड़े रहने का उनका साहस तो हमें पता ही है कि ऐसा करने के बाद वे सब भाग खड़े हुए और उनके खिलौना बंदूकबाज पदाधिकारी अब तक छिपे-भागे फिर रहे हैं. ये सब उसी परंपरा के 'वीर' हैं, जिस परंपरा के लोग 30 जनवरी, 1948 को बिरला भवन में असली नाथूराम गोडसे के साथ मौजूद थे. सभी बला के कायर थे. उनकी योजना 80 साल के बूढ़े, निहत्थे आदमी की हत्या करके वहां से निकल भागने की थी. वे भगत सिंह नहीं थे, जिन्होंने बम फेंकने के बाद वहां से भाग निकलने की चंद्रशेखर आजाद की योजना को मानने से सिर्फ इनकार ही नहीं कर दिया था, बल्कि बम फेंकने के बाद भाग निकलने का पूरा अवसर होने पर भी न भागे और न छिपे. वह वहीं खड़े रहे, नारे लगाते रहे और फिर डर से बिलबिलाते सुरक्षाकर्मियों को बताते रहे कि हमारे पास दूसरा कोई हथियार नहीं है कि जिसका तुम्हें खतरा हो, आओ और हमें गिरफ्तार कर लो! ऐसे लोगों के लिए अर्नेस्ट हेमिंग्वे ने साहस की परिभाषा गढ़ी थी- 'घोर विपदा के समय भी व्यक्तित्व का सहज सौंदर्य अक्षुण्ण रहे, यही साहस है.' और, गांधी इसलिए ही इन बहादुरों के समक्ष नतमस्तक हुए थे और कहा था कि इन नौजवानों ने मृत्युभय को जीत लिया है, जिसकी साधना मैं भी ताउम्र करता आ रहा हूं.

कायरों की अलग-अलग पहचान नहीं होती है, कायरों की जाति होती है, लेकिन मैं जानना चाहता हूं कि महात्मा गांधी कि हत्या करनेवाले 1948 के उन कायरों और 2019 के इन कायरों के नामलेवा आज कहां छिपे बैठे हैं? वे आगे आ कर इनकी पीठ क्यों नहीं ठोकते कि इन्होंने वह किया है, जो आप भी करना चाहते तो थे और करना चाहते तो हैं, लेकिन हिम्मत नहीं होती? वर्ष 1947 से लेकर 2014 से पहले तक जो लोग दिल्ली और राज्यों की कुर्सियों पर बैठे थे, उनमें से कोई भी 'गांधी का आदमी' नहीं था. जवाहरलाल नेहरू पर तो यह इल्जाम है कि आजाद भारत को गांधी की तरफ पीठ करने का रास्ता उन्होंने ही बताया और तब देश की तथाकथित बौद्धिक बिरादरी में गांधी के विचारों के प्रति उपहास का भाव पैदा किया, लेकिन उनमें इतना साहस था कि गांधी के रहते हुए भी और उनकी अनुपस्थिति में भी उन्होंने कहा कि वह गांधी-विचार में विश्वास नहीं रखते हैं और देश के विकास का उनका अपना नक्शा है, लेकिन ऐसा कहनेवाले वह अकेले नहीं थे. क्या सरदार पटेल, क्या राजेंद्र प्रसाद और क्या मौलाना आजाद और क्या दूसरे कई नेता, सबको गांधी का बोझ भारी लगता था और सबने उनसे मुक्ति पाकर राहत ही पायी थी? लेकिन एक फर्क था- बहुत बड़ा फर्क! वे सब कबूल करते थे कि गांधी का रास्ता इतना कठिन है कि हम उसके सही-गलत का विश्लेषण करने में वक्त लगाने की न तैयारी रखते हैं, न योग्यता. वे सभी गांधी नामक इंसान का गहरा सम्मान करते थे- पूजा का भाव रखते थे. हालांकि गांधी की नजर से देखें, तो ऐसे सम्मान का कोई मतलब नहीं होता है, लेकिन गांधी की नजर यदि उनके पास होती भी, तो यह खाई पैदा ही कैसे होती? जब तक नेहरू की समझ में आया कि देश को लेते हुए वह इस खाई में गहरे गर्त हो चुके हैं, तब तक बहुत देर हो चुकी थी. निःसंदेह उनकी यह देरी, उनकी यह चूक बड़ी थी, जिसकी गवाही हमारा इतिहास, पूरी मानव सभ्यता दे रही है.

यहां किस्सा एकदम ही दूसरा है. ये ऐसे लोग हैं, जो गांधी को समझने की कुव्वत ही नहीं रखते हैं, लेकिन असभ्य इतने हैं कि उनका सम्मान करने का शील भी नहीं रखते हैं. अलीगढ़ में जो हुआ, उसकी भूमिका कहां, किसने बनायी? सता की कमान जिनके हाथ में है, उनका मुखौटा हटा कर देखें, तो वे वही लोग मिलेंगे, जो हमें ऊना में मिले थे, जो बुलंदशहर मिले थे. मैं समझता हूं कि असहिष्णुता और संकीर्णता का, सांप्रदायिकता और झूठ का हर पैरोकार गांधी का हत्यारा है.

उद्दात्त मन का समाज बनाना एक लंबी, सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रिया है, जिसमें आपको तलवार की धार पर चलना पड़ता है, बाजवक्त गोली झेलनी पड़ती है, फिर चाहे वह ईसा हों, केनेडी हों, मार्टीन लूथर किंग हों या गांधी हों! समाज को हिंसक, खूंखार और संकीर्ण मतवादी बनाना बहुत आसान है. यह बच्चों के फिसलपट्टी के खेल की तरह होता है. एक बार धक्का लगा दो, बस! फिर तो वह अपने वेग से ही नीचे उतरता चला जाता है. यही देश में हो रहा है. इसे कौन, कैसे रोकेगा? ऐसे तत्वों की गिरफ्तारी जिन्हें करनी हो, वे करें, लेकिन समाज को तो इनका प्रतिकार करना ही होगा. जहां-जहां भारत में भारत के कद का इंसान रहता है, वहां-वहां यह प्रतिकार मनसा-वाचा-कर्मणा करना होगा- हमें भी और आपको भी!

आपके पत्र

67 एकड़ गैर विवादित जमीन !

आस्था की शक्ति ने हमारे देश की राजनीति को कभी धर्म से अलग नहीं होने दिया. लोगों का मानना है कि धर्म और राजनीति सिक्के के दो पहलू हैं. दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक मेले में राजनीतिक संसद से धार्मिक संसदों तक का आयोजन इसी अवधारणा के गवाह रहे हैं. देश में गरीबी, बेरोजगारी, बीमारी और अशिक्षा से मुक्ति का मार्ग शायद कुंभ की डुबकी से निकल कर अयोध्या तक जाता हो. अयोध्या मामले में अदालत में आयी 67 एकड़ की गैर विवादित जमीन की एक अर्जी ने ऐसा बवाल मचाया कि साधु समाज से अखाड़े और सत्ता से विपक्ष तक में आगे निकल जाने की होड़-सी मच गयी. वर्षों से इस जमीन का दावेदार कोई नहीं, मगर आस्था के तुक्के पर राजनीति का तीर लगना तय है. रामजन्म भूमि की 67 एकड़ जमीन पर मंदिर बने या न बने, चुनाव के लिए सियासी जमीन का बन जाना तो पक्का है.

एमके मिश्रा, रातू, रांची

आयकर स्लैब को लेकर कई भ्रम

लोगों को ऐसा भ्रम क्यों हो गया है कि आयकर की सीमा को सीधे 2.5 लाख से बढ़ा कर पांच लाख रुपया कर दिया गया है. सच्चाई तो यह है कि सरकार ने 2014-15 के बाद से 2.5 लाख की सीमा में कोई बढ़ोतरी नहीं की है और अंतरिम बजट में भी सीमा 2.5 लाख ही है. हां, इसके बाद यदि कोई धारा 80सी के अंतर्गत 1.5 लाख का निवेश करता है और उसकी करयोग्य आय पांच लाख से अधिक नहीं होती है, तो उसे धारा 87ए के तहत 12,500 रुपये की कर छूट मिल जायेगी. उसको कोई कर नहीं चुकाना होगा. यह छूट पहले पांच हजार थी, जिसे 2017-18 में दो हजार पांच सौ रुपये कर दिया गया. बजट में अगर आयकर स्लैब को सीधे 2.5 लाख से बढ़ा कर तीन लाख भी कर दिया जाता, तो कुछ राहत होती. फिर भी मोदी सरकार को साधुवाद कि उन्होंने आयुष्मान योजना में 6400 करोड़ का आवंटन दिया, मनरेगा की राशि बढ़ाई, श्रमयोगी मानधन वृहत पेंशन योजना और किसान सम्मान निधि योजना की शुरुआत की.

पारस नाथ सिन्हा, हरमू, रांची

बेनामी संपत्ति पर अंकुश लगे

बेनामी संपत्ति भ्रष्टाचार का जरिया तो है ही, कालेधन को खपाने-छिपाने का भी स्रोत है. बेनामी संपत्ति वाले बहुत सारे लोग राजनीति में भी सक्रिय हैं. नेताओं के साथ नौकरशाह भी बेनामी संपत्ति के जरिये अपनी काली कमाई ठिकाने लगाते हैं. यदि सरकार बेनामी संपत्ति वालों पर सचमुच शिकंजा कसना चाहती है, तो उसे आयकर विभाग को आवश्यक संसाधनों से लैस करने के साथ ही यह भी देखना होगा कि बेनामी संपत्तियों के मामलों की सुनवाई के लिए न्यायिक प्राधिकरण अपनी पूरी क्षमता के साथ काम करने में सक्षम हो. अभी ऐसी स्थिति नहीं है और इसी कारण करोड़ों की संपत्ति की जब्ती के मामले भी अधर में अटके हैं. नये बेनामी कानून के तहत सरकार को एक प्राधिकरण का गठन करना था, लेकिन यह अब तक नहीं हो सका है. इससे बेनामी संपत्ति जब्ती के मामले तेजी से नहीं निबट पा रहे हैं.

डॉ हेमंत कुमार, भागलपुर

बोधि वृक्ष

सुंदर है असुरक्षा

स्वर्ग में प्रेम नहीं हो सकता. क्योंकि असल में वहां कोई जीवन ही नहीं है. जीवन यहां इस पृथ्वी पर है, जहां मृत्यु है. जब भी तुम कुछ सुरक्षित कर लेते हो, जीवन खो जाता है. असुरक्षित रहो. यह जीवन का ही गुण है और यह सुंदर है. जरा सोचो, यदि तुम्हारा शरीर अमर होता, तो वह कितना कुरूप होता. तुम आत्मघात करने के उपाय खोजते रहते. और यदि यह असंभव है, कानून के विरुद्ध है, तो तुम्हें इतना कष्ट होगा कि कल्पना भी नहीं कर सकते. अमरत्व एक बहुत लंबी बात है. अब पश्चिम में लोग स्वेच्छा मरण की बात सोच रहे है. क्योंकि लोग अब लंबे समय तक जी रहे हैं. जो व्यक्ति सौ वर्ष तक पहुंच जाता है, वह स्वयं को मारने का अधिकार चाहता है. वास्तव में, यह अधिकार देना ही पड़ेगा. जब जीवन बहुत छोटा था, तो हमने आत्महत्या न करने का कानून बनाया था. पहले लोग बड़ी आसानी से डेढ़ सौ साल तक जी सकते थे. अब सौ साल के व्यक्ति को जीने जैसा नहीं लगता. ऐसा नहीं है कि यह परेशान हो गया है, उसके पास भोजन नहीं है. सब कुछ है, पर जीवन का कोई अर्थ नहीं रह गया. अमरत्व की सोचोगे, जीवन बिलकुल अर्थहीन हो जायेगा. अर्थ मृत्यु के कारण होता है. प्रेम का अर्थ है, क्योंकि प्रेम खोया जा सकता है. तब प्रेम धड़कता है, स्पंदित होता है. प्रेम खो सकता है. तुम उसके बारे में निश्चित नहीं हो सकते. तुम उसे कल पर नहीं टाल सकते. क्योंकि हो सकता है कल प्रेम रहे ही न. तुम्हें प्रेमी या प्रेमी को इस तरह से प्रेम करना होगा कि हो सकता है कल आये ही न. फिर प्रेम सधन होता है. तो पहली बात, सुरक्षित जीवन पैदा करने के अपने सारे प्रयास हटा लो. बस यह प्रयास हटाने से ही तुम्हारे आस-पास की दीवारें गिरने लगेंगी. पहली बार तुम्हें लगेगा कि वर्षा तुम पर सीधी पड़ रही है. हवाएं सीधी तुम तक बह रही हैं. सूर्य सीधा तुम तक पहुंच रहा है. तुम खुले आकाश के नीचे आ जाओगे. सुंदर है यह, लेकिन तुम्हें अगर यह विचित्र लगता है, तो इसलिए, क्योंकि तुम कारागृह में रहने के आदी हो गये हो.

आचार्य रजनीश ओशो

कुछ अलग

गरीबी का घणा महत्व है

आलोक पुराणिक
वरिष्ठ व्यंग्यकार
puranika@gmail.com

चालू विश्वविद्यालय द्वारा गरीबी, खेती और बजट पर आयोजित निबंध प्रतियोगिता में जिस निबंध ने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया है, वह है- गरीबी का हमारे आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जीवन में घणा महत्व है. राजनीति में गरीबी का इतना महत्व है कि इंदिरा गांधी ने गरीबी हटाओ के नारे पर चुनाव जीता था और करीब पचास साल बाद उनके पौत्र राहुल गांधी गरीब-हित में गरीबों के लिए इनकम गारंटी की मांग कर रहे हैं. इससे पता चलता है कि नेताओं में गरीबी के प्रति गहरा क्रेज है. कुछ नेताओं में तो भय तक व्याप्त है कि अगर गरीबी खत्म हो गयी, तो फिर वे क्या खत्म करने का वादा करेंगे. एक नेता गरीबी हटाने की नीति लेकर आता है, तो दूसरा कहता है, ये तो गरीबी हटाने में हमारी नकल कर रहा है. असली गरीबी-हटावक हम ही हैं. डर यह है कि प्रतिद्वंदी पार्टी के नेता ने ही गरीबी हटा दी, तो हम क्या हटायेंगे. हर नेता चिंतित है कि कहीं गरीबी हट न जाये, काम भर के गरीब तो बचे ही रहने चाहिए, ताकि उन्हें लेकर अगले पचास साल बाद भी वादे हो सकें.

गरीबी का सांस्कृतिक महत्व है. सत्तर अस्सी के दशक में जो हिट फिल्में बनती थीं, उनमें हीरो गरीब होता था और हीरोईन अमीर होती थी. आखिर में हीरोईन हीरो की हो जाती थी, इस तरह की फिल्में देख कर बहुत नौजवान कतई आलसी टाइप हो लिये थे, वह सिर्फ अमीर कन्या से सेटिंग करने में बिजी रहते थे. इसी वजह सत्तर के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था की उत्पादकता निम्न स्तर पर थी और तमाम बजटों में घाटा दिखाया जाता था. अस्सी-नब्बे के दशकों में नौजवान कुछ कर्मण्य हुए और उन्हें समझ में आया कि सुंदरियां इंडियन नौजवानों को नहीं, नॉन रेजीडेंट इंडियन एनआरआई नौजवानों को लिफ्ट देती हैं. फिर भारतीय नौजवानों ने कड़ी मेहनत की और भारतीय अर्थव्यवस्था को नयी ऊंचाइयां दीं.

अब नौजवान टीवी पर न्यूज देखता है, तो उसे बताया जाता है कि वह वाली पेंशन मुफ्त मिलेगी, यह वाला भत्ता मुफ्त मिलेगा. इतनी इनकम की तो गारंटी ही है. रंगीन टीवी चुनाव से पहले वो वाली पार्टी मुफ्त में देगी और बीस किलो चावल उस पार्टी से मुफ्त आया करेगा. बिजली मुफ्त करने का वादा उस पार्टी ने कर दिया है और पानी तो मुफ्त उस पार्टी ने चला ही रखा है. मुफ्तखोरी के ऐसे महोत्सव चल रहे हैं कि अच्छा खासा कर्मठ नौजवान भी घर बैठ कर भूतों वाले सीरियल देखने में बिजी हो जाये. मांएं बेटों को कुछ काम करने के लिए डपटती हैं, तो बेटे जवाब देते हैं- मां घबरा मत, तीन हजार रुपये पेंशन वहां से आयेगी, पांच सौ रुपये वहां से आयेंगे. बच्चा होगा, तो मुख्यमंत्री गर्भवती स्त्री स्कीम में पंद्रह सौ रुपये मिलेंगे.

संभव है कि कुछ दिनों बाद नेतागण पहरा बिठा दें कि कहीं कोई नौजवान कुछ काम करके अपनी गरीबी दूर न कर ले. गरीबी दूर हो गयी, तो फिर क्या खत्म करने के वादे पर चुनाव जीतेंगे. इस तरह से हम समझ सकते हैं कि गरीबी का घणा राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक महत्व है.

देश दुनिया से

अमेरिकी राष्ट्रपति पद की हिंदू दावेदार विवादों में

तुलसी गाबार्ड की अमेरिका के राष्ट्रपति पद पर नजर बनी हुई है. लेकिन, चुनावों के दौर में औपचारिक रूप से उतरने के पहले ही तुलसी हिंदू होने के कारण विवादों में हैं. तुलसी के पास अमेरिकी कांग्रेस की पहली हिंदू सदस्य, भगवद्गीता पर हाथ रखकर अपने पद की शपथ लेनेवाली पहली प्रतिनिधि, सबसे कम उम्र की सांसद, अमेरिकन समोआ से चुनाव जीत कर कांग्रेस पहुंचनेवाली पहली महिला और युद्ध में भाग ले चुकी महिलाओं में से कांग्रेस तक पहुंचनेवाली दो महिलाओं में से एक होने का तमगा हासिल हो चुका है. अब वे राष्ट्रपति पद की रेस में उतरने वाली पहली हिंदू-अमेरिकी हैं. उन्होंने साल 2017 में सीरिया के राष्ट्रपति असद से मुलाकात करके सबको चौंका दिया था. उनकी पार्टी ने भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ उनकी मुलाकातों पर सवाल उठाते हुए हिंदू राष्ट्रवाद से जोड़ने की कोशिश की थी. एक पत्रिका ने उनके पूर्व के चुनाव अभियानों में चंदा देनेवालों की सूची प्रकाशित कर कहा था कि इनमें कई हिंदू नाम हैं. इन सबके बीच गाबार्ड अपनी विवादों में घिरी छवि को साफ करने की फिराक में हैं. तुलसी के अनुसार, जिन्हें उनके हिंदू होने पर ऐतराज है, वे लोग अमेरिकी संविधान को नीचा दिखा रहे हैं.

DW

कार्टून कोना

साभार : बीबीसी

पोस्ट करें : प्रभात खबर, 15 पी, इंडस्ट्रियल एरिया, कोकर, रांची 834001, **फैक्स करें** : 0651-2544006,
मेल करें : eletter@prabhatkhabar.in पर ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है